डूबते वाम को कन्हैया का सहारा

बहरहाल, मोदी के सत्ता में आने के साथ ही धर्मनिरपेक्षता के सवाल को लेकर इन वामपंथी दलों की प्रासंगिकता एक बार फ़िर सामने आ गई है। यद्यपि साम्प्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता की इनकी समझ सतही रही है। भूलना नहीं होगा कि देश की आज़ादी के पूर्व कम्युनिष्ट पार्टी के धर्म के आधार पर राष्ट्र के विभाजन और पाकिस्तान के निर्माण का समर्थन किया था। यही नहीं, कम्युनिष्टों के धर्म के आधार पर उर्दू को मुसलमानों की भाषा मानने की वकालत भी की थी। जहां तक कांग्रेस के धर्म निरपेक्ष चरित्र का सवाल है तो यह भूला नहीं जा सकता कि इसी पार्टी ने इन्दिरा गांधी की हत्या के बाद बड़े पैमाने पर सिखों का कत्लेआम कराया था। विवादित रामजन्मभूमि का ताला भी कांग्रेस शासन के दौरान ही खोला गया जिसे भाजपा ने अपनी राजनीति का मुख्य मुद्दा बनाया, बाबरी मस्जिद का ध्वंस किया, साम्प्रदायिक दंगे फ़ैलाये और धार्मिक उन्माद बढ़ाकर आखिरकार सत्ता में आने में सफ़ल रही। भाजपा और कांग्रेस की साम्प्रदायिक नीति में एक फ़र्क ये है कि भाजपा जहां हिन्दू साम्प्रदायवाद की राजनीति करती है, कांग्रेस अल्पसंख्यक सम्प्रदायिकता यानी तृष्टिकरण के साथ हिन्दू लहर की सवारी भी गांठ लेती है। अन्य क्षेत्रीय दलों और नेताओं की हालत भी कमोबेश ऐसी ही है।

नरेन्द्र मोदी को सत्ता में आये अभी दो साल हुए हैं, लेकिन इतने कम समय में ही उनके 'अच्छे दिनों' की कलई खुल गई है। हर मोर्चे पर मोदी सरकार की असफलता जगजाहिर हो चुकी है। जिन लोग़ों ने बदलाव की उम्मीद से भाजपा को वोट दिया था, उनमें निराशा और असंतोष की भावना व्याप्त है। जनता अपने आप को ठगा हुआ महसूस कर रही है, लेकिन अब उसके हाथ में अच्छे दिनों के झुनझुने के अलावा और कुछ भी नहीं है।

मोदी सरकार अपने कारनामों की वजह से इस कदर अलोक प्रिय हो चुकी है कि अगर आज आम चुनाव हों तो वह धड़ाम से गिर जायेगी। भाजपा और उसकी सहयोगी पार्टियों के लिये दोबारा सत्ता में आना तो असम्भव है, लेकिन जब तक वह सत्ता में रहेगी, देश की अर्थ व्यवस्था को खोखला करने के साथ समाज में भी भयंकर अराजकता फ़ैला देगी। पांच वर्षों के दौरान यह देश को जितना नुकसान पहुंचा देगी, उसकी भरपाई कर पाना आनेबाले 25 वर्षों में भी संभव नहीं हो सकेगा। विकास के नारे के साथ सत्ता में आने वाली भाजपा की नीतियां हर मोर्चे पर देश को पिछड़ेपन की ओर ले जाने वाली है। इस सरकार का हर वायदा थोथा सावित हो रहा है। इसने जनता के साथ बहुत बड़ा धोखा किया है।

अब सवाल है कि जब आम चुनाव होंगे तो इसका विकल्प क्या होगा। जैसे काठ की हांड़ी दोबारा नहीं चढ़ती, वैसे ही भाजपा और इस देश के सबसे अहमक प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी दोबारा सत्ता में आनेवाले नहीं हैं, लेकिन इनके बाद कौन, यह सवाल लोगों के मन में उभर रहा है और इसका कोई जवाब भी नहीं मिल पा रहा है। बहुत से लोग़ों का मानना है कि अगले आम चुनाव में कांग्रेस सत्ता में आयेगी। लेकिन इस बात पर स्वयं कांग्रेसी नेता भी संशय में पड़े दिखाई देते हैं।

कांग्रेस अब लगभग एक नेतृत्वविहीन पार्टी बन कर रह गई है। राहुल गांधी में जब पार्टी का नेतृत्व करने की क्षमता नहीं है, तो वे देश का नेतृत्व क्या कर पायेंगे। परिवारवाद ने कांग्रेस की लुटिया डुबो दी। इसके अलावा उस अभूतपूर्व भ्रष्टाचार ने, जो अभी भी सोनिया-राहुल एवं अन्य कांग्रेसी नेताओं का पीछा नहीं छोड़ रहा है। बहुत से लोग कहते हैं कि अगर प्रियंका बाड्रा कांग्रेस का नेतृत्व सम्भालती हैं तो पार्टी में नई जान आ सकती है। लेकिन पुत्रमोह में डूबी सोनिया प्रियंका को पार्टी का नेतृत्व नहीं सौंपेंगी। वैसे भी एक सतही बात है कि नेतृत्व परिवर्तन से कांग्रेस में नई जान आ सकती है। भूलना नहीं होगा कि कांग्रेस के कुशासन और कुकर्मों ने ही वह ज़मीन तैयार की जिस पर भाजपाइयों ने अपनी सत्ता का महल खड़ा कर दिया। अब इस पार्टी के दोबारा उभर पाने की सम्भावना नहीं के बराबर है। लेकिन इस देश की मुख्य धारा की वामपंथी पार्टियों- सीपीआई और सीपीआई (एम) ने इस पर पूरा भरोसा जताया है और इसके नेतृत्व में भाजपा के खिलाफ़ मोर्चाबंदी को तैयार हैं। जबकि कांग्रेस के सत्ता में रहने के दौरान इन वामपंथी दलों ने इससे अपना समर्थन वापस ले लिया था। अब भाजपा की चुनौती ने इन्हें फ़िर कांग्रेस के साथ खड़े होने को मजबूर कर दिया।

इन वामपंथी दलों ने प्रारम्भ से ही कांग्रेसी सरकारों का साथ दिया है। इसके अलावा, कांग्रेस का समय-समय पर विरोध भी करती रही हैं। ऐसा ये तात्कालिक परिस्थितियों की मांग और जरूरत बताकर करती रहीं हैं। अमेरिका से परमाणविक सन्धि के मसले पर कांग्रेस नेतृत्व वाली संप्रग सरकार से जब इन्होंने समर्थन वापस ले लिया तो इनकी स्थिति कमज़ोर पड़ गई। पश्चिम बंगाल में साढ़े तीन दशक से भी ज़्यादा लम्बे समय तक सत्ता में रहने के बावजूद इन्हें ममता बनर्जी के हाथों करारी शिकस्त का सामना करना पड़ा। इसके मूल में इनके प्रति जनता का गहरा असन्तोष था। इन दलों ने बंगाल में पूंजीपतियों के हित में सिंगूर और नंदीग्राम में किसानों की ज़मीनें हथियाने की कोशिश की थी जिसे लेकर व्यापक जन आन्दोलन खड़ा हो गया था। सत्ता हाथ से निकलते ही ये वामपंथी पार्टियां अप्रासंगिक सी हो गई। इसका एक कारण अपने पुराने सहयोगी कांग्रेस से दूर हो जाना भी रहा।

बहरहाल, मोदी के सत्ता में आने के साथ ही धर्मनिरपेक्षता के सवाल को लेकर इन वामपंथी दलों की प्रासंगिकता एक बार फ़िर सामने आ गई है। यद्यपि साम्प्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता की इनकी समझ सतही रही है। भूलना नहीं होगा कि देश की आज़ादी के पूर्व कम्युनिष्ट पार्टी के धर्म के आधार पर राष्ट्र के विभाजन और पाकिस्तान के निर्माण का समर्थन किया था। यही नहीं, कम्युनिष्टों के धर्म के आधार पर उर्दू को मुसलमानों की भाषा मानने की वकालत भी की थी। जहां तक कांग्रेस के धर्म निरपेक्ष चरित्र का सवाल है तो यह भूला नहीं जा सकता कि इसी पार्टी ने इन्दिरा गांधी की हत्या के बाद बड़े पैमाने पर सिखों का कत्लेआम कराया था। विवादित रामजन्मभूमि का ताला भी कांग्रेस शासन के दौरान ही खोला गया जिसे भाजपा ने अपनी राजनीति का मुख्य मुद्दा बनाया, बाबरी मस्जिद का ध्वंस किया, साम्प्रदायिक दंगे फ़ैलाये और धार्मिक उन्माद बढ़ाकर आखिरकार सत्ता में आने में सफ़ल रही। भाजपा और कांग्रेस की साम्प्रदायिक नीति में एक फ़र्क ये है कि भाजपा जहां हिन्दू साम्प्रदायवाद की राजनीति करती है, कांग्रेस अल्पसंख्यक सम्प्रदायिकता यानी तृष्टिकरण के साथ हिन्दू लहर की सवारी भी गांठ लेती है। अन्य क्षेत्रीय दलों और नेताओं की हालत भी कमोबेश ऐसी ही है।

यह देखते हुए वर्त्तमान मोदी सरकार के विकल्प में कैसी ताकतें मौजूद हैं इसका एक हद तक अंदाज़ा लगाया जा सकता है। भ्रष्टाचार के मामले में कांग्रेस आगे है या भाजपा, या दोनों एक दूसरे से बढ़-चढ़ कर है, कह पाना आसान नहीं। साम्राज्यवादी अमेरिका के आगे आत्मसमर्पण करने के मामले में भी कांग्रेस और भाजपा एक-दूसरे से होड़ करती रही है। इसे देखते हुए समझा जा सकता है कि अपने कर्मों के कारण अगर मोदी सरकार अगले आम चुनाव में सत्ता हारती है तो उसका विकल्प क्या और कैसा होगा?

फ़िलहाल, कांग्रेस और वामपंथी दलों के पास नेतृत्व का अभाव है। कांग्रेस के नेता के रूप में राहुल गांधी बुरी तरह फ़्लॉप साबित हुए हैं, लेकिन वामपंथियों को जेएनयू छात्र संघ के अध्यक्ष कन्हैया के रूप में एक नया नेता मिल गया है। इस नेता पर वामपंथियों के साथ ही कांग्रेसियों की नज़र भी गड़ी हुई है। कन्हैया का उभार चन्द महीने पहले जेएनयू में हुए एक विवादास्पद कार्यक्रम के आयोजन से हुआ। कन्हैया और उसके साथियों पर राष्ट्रद्रोह का आरोप लगा और उसे जेल की हवा भी खानी पड़ी। लेकिन इससे कन्हैया रातों-रात स्टार बन गया और विकल्प की राजनीति या वामपंथियों के शब्दों में 'क्रान्ति' का केन्द्र बन गया। कांग्रेस के भ्रष्ट नेताओं ने कन्हैया को आज का भगत सिंह घोषित कर दिया। कन्हैया को कांग्रेस की आला कमान ने मिलने के लिये आमंत्रित किया। उसने राहुल गांधी और अन्य बड़े कांग्रेसी नेताओं से आशीर्वाद प्राप्त किया। कांग्रेस ने उसे अपना स्टार प्रचारक घोषित कर दिया। उस पर धन-धान्य की वर्षा होने लगी और अब वह जेट की सवारी करता हुआ पूरे देश में मोदी और संघ की सत्ता के खिलाफ़ क्रान्ति की घोषणा करता घूम रहा है। उसके साथियों ने जेएनयू को 'क्रान्ति' का केन्द्र घोषित कर दिया है और वहां 'तहरीर' चौक स्थापित कर अलख जगाये हुए हैं। जाहिर है ऐसी अगम्भीरता और छिछलेपन के साथ आरएसएस की साम्प्रदायिक चुनौती का सामना नहीं किया जा सकता। लेकिन कैसी विडम्बना है कि पढ़े-लिखे गंभीर और बुद्धिजीवी वामपंथी नेताओं ने कन्हैया और उसके चन्द साथियों के हाथों आन्दोलन की कमान सौंप दी है जो लकड़ी की तलवारें भांज रहे हैं और जम कर नाम-नामा कमाने में लगे हुए हैं। अभी हाल ही में कांग्रेस द्वारा भगत सिंह घोषित किये गये कन्हैया ने पटना जाकर लालू के पैर छूए और आशीर्वाद हासिल किया। लालू और नीतीश मोदी के खिलाफ़ बन रहे कांग्रेसी नेतृत्व बाले मोर्चे के प्रमुख नेता हैं। नीतीश को उनके समर्थक प्रधानमंत्री पद का दावेदार बता रहे हैं। कुल मिलाकर स्थितियां बहुत बेढब हैं। राजनीति ने पूरी तरह एक प्रहसन का रूप ले लिया है। अब नरेन्द्र मोदी जायें या रहें जनता को कोई फ़र्क नहीं पड़नेवाला। लूट-मार का दौर-दौरा जारी रहेगा। फ़िलहाल, इस देश में जो जितना बड़ा लुटेरा होगा, उसीका चौकीदार राज करेगा।

-दिव्यांग

अगर मोदी की डिग्री झूठी है तो कोई बात नहीं, लेकिन अगर सच्ची है तो भारतीय शिक्षा व्यवस्था से बचा-खुचा विश्वास भी उठ जायेगा !

रामदेव, रविशंकर के बाद अब आसाराम ने भी 'ठुकराया' नोबेल

.....अंगूर खट्टे हैं

श्री श्री रविशंकर के इस खुलासे के बाद कि उन्होंने शांति के नोबेल पुरस्कार का ऑफर ठुकरा दिया था, जेल में सजा काट रहे आसाराम बापू ने भी ऐसा ही दावा किया।देश में क्लीन चिटों और पद्म पुरस्कारों की बंदरबांट के बाद लगता है अब अंतरराष्ट्रीय पुरस्कारों की वैल्यू भी धड़ाम से गिर चुकी है। निशाने पर है प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार। पहले बाबा रामदेव ने कहा कि काला होने की वजह से उन्हें नोबेल नहीं मिला (वरना वो सबसे लायक थे), और अब आज श्री श्री रविशंकर ने भी खुलासा कर दिया कि उन्होंने शांति के नोबेल पुरस्कार का ऑफर ठुकरा दिया था, और मलाला नोबेल के लायक नहीं थी।

लेकिन हद तो तब हो गयी जब जेल में सजा काट रहे आसाराम बापू जी ने भी प्रेस कांफ्रेंस बुलाकर नोबेल पुरस्कार का 'ऑफर' ठुकरा दिया। मामले की पड़ताल की गई तो पता चला कि आसाराम बापूजी को शांति का नहीं, बल्कि साहित्य का नोबेल पुरस्कार ऑफर किया गया था।

पाठकों को याद होगा कि पिछले साल ही आसाराम ने एन. डी. तिवारी जी के साथ मिलकर एक एंटी-रेप पार्टी लांच की थी, और इस मौके पर आसाराम की किताब 'महिला सशक्तिकरण में नैतिक मूल्यों की भूमिका' का विमोचन भी किया गया था। सूत्रों के अनुसार आसाराम को इसी किताब के लिए साहित्य का नोबेल पुरस्कार ऑफर किया गया था।

इस मौके पर आसाराम ने रविन्द्रनाथ टैगोर और प्रेमचंद को भी आड़े-हाथों लिया, और उनकी रचनाओं को 'मामूली' बताया।